कमल कुमार के कहानी संग्रह ''मदर मेरी और अन्य कहानियाँ'' में संघर्षशील नारी

Dr. Krishna Devi
Assistant Professor
Department of Hindi
Maharshi Dayanand University
Rohtak (Haryana)

सामाजिक संरचना में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान युग में नारी अपने अधिकारों के प्रति सचेत है, वह पुरूष की छाया मात्र न बनकर स्वयं आत्मनिर्भर बनना चाहती है। विभिन्न कर्मक्षेत्रों में वह अपनी सक्रिय भूमिका द्वारा अपनी अबला संज्ञा को नकारने के प्रयास में है। स्त्री ने एकाधिकार वाले क्षेत्रों में कदम रखकर यह साबित कर दिया है कि स्त्रियाँ कुछ भी करने में सक्षम है।

कमल कुमार की कहानियों की नायिकाएँ किसी न किसी स्तर पर आत्मनिर्भर हैं। इनकी नायिकाएँ अपने आर्थिक अधिकारों के लिए संघर्ष करती हुई अपने लिए उस धरातल का निर्माण कर लेती हैं, जिस पर अवस्थित होकर, वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था के चक्रव्यूह को तोड़ सके। कमल जी ने अपनी कहानियों में सर्वत्र अर्थ स्वातंत्रय को महत्व दिया है।

स्त्री को 'आधी दुनिया' कहा जाता है लेकिन विडम्बना है कि उसके हिस्से न आधी जमीन है न आधा आसमान। वह हाशिये पर एक ओर सिकुडी जिन्दगी जीने के लिए जीवन भर बाध्य रही है और उसकी नियति अपनी पुत्रियों–पौत्रियों को हस्तांतरित कर शून्य में विलीन होती रही है। नवजागरण आन्दोलन के बाद स्त्री जागृति एक व्यापक आन्दोलन का रूप लेकर बीसवीं सदी में बेहद सकारात्मक एवम् ठोस रूप में प्रकट हुई है। स्त्री ने अपने हिस्से की जमीन और आसमान को हक से माँगना शुरू किया है। शिक्षा के साथ रोजगार के अवसर भी पाए हैं और परिवारों को आर्थिक सम्भल देकर वह जिम्मेदार पुरूष की भूमिका में भी उत्तीर्ण होने लगी है, लेकिन फिर भी मुक्ति की गति बेहद मंथर है और विश्वव्यापी आंकड़े चौंकाने वाले हैं। विश्व में महिलाएँ दो तिहाई श्रम करती है, परंतु उसका भुगतान उस मात्रा में नहीं हो पाता यानि कुल आय का उसे एक प्रतिशत ही प्राप्त होता है।

फैड्रिक एंगिल्स और मार्क्स ने अपनी बहुचर्चित पुस्तक 'The origin of family private property and state' में ठीक कहा है कि स्त्री की मुक्ति तब तक सम्भव नहीं है, जब तक वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं हो जाती। आर्थिक आत्मनिर्भरता व्यक्तित्व में नया आत्मविश्वास एवं स्वाभिमान का भाव पैदा करती है, बुद्धि, शिक्षा एवं विवेक के सदुपयोग की राह सरल होती है। प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने का हौसला

देती है और आवश्यकता पड़ने पर अपने बलबूते स्वतन्त्र निर्णय लेने का विवेक उत्पन्न करती है। संभवतया इसी कारण 19वीं सदी का भारतीय नवजागरण आन्दोलन स्त्री के चहुँमुखी व्यक्तित्व के विकास के लिए शिक्षा एवं रोजगार दोनों पर अत्याधिक बल देता रहा है। यही नहीं ''संघ स्वतन्त्र भारत में 'हिन्दू कोड बिल' का समर्थन करते हुए तीन प्रसिद्ध महिला नेताओं – रेणुका राय, सुचेता कृपलानी तथा जी० दुर्गाबाई ने कहा था कि आर्थिक व सामाजिक समानता के बिना राजनीतिक स्वतन्त्रता व्यर्थ है, क्योंकि राजनीतिक समानता भले ही उसे आगे बढ़ने के अवसर दे दे, सामाजिक समानता के बिना वह न परिवार न समाज में सम्मानजनक स्थान पा सकती है और न आर्थिक समानता के बिना उसमें आत्मविश्वास व स्वतन्त्रता की भावना घर कर सकती है। वे स्पष्ट कहती है कि पैतृक सम्पत्ति में भाग मिल जाने मात्र से ही स्त्रियों को आर्थिक रूप से स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता। अपने श्रम के माध्यम से अर्थोपार्जन करने वाली स्त्रियों को ही आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र माना जा सकता है। अतः इन कार्यरत महिलाओं की कार्यावस्थाओं में सुधार करने के लिए उन्हें कुछ सुविधाएँ दिलाने के लिए तथा नौकरी के समान अवसर उपलब्ध कराने के लिए समय–समय पर महिला संगठन प्रयास करते रहे हैं।''[1]

स्त्री की आर्थिक आत्मनिर्भरता जागरूकता के साथ संगुम्फित होकर उसे पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था का पुनरीक्षण करने का विवेक देती है। ऊँचा वेतन पाती स्त्री यदि आज भी विश्व में दोयम दर्जे की प्राणी समझी जाती है तो इसका कारण है पितृसत्तात्मक व्यवस्था का वर्चस्व जो शास्त्र और संस्कृति की दुहाई देकर स्त्री और पुरूष को छवियों में कैद करता रहा है। अपनी–अपनी बन्द छवियों में जीवन यापन करने में घुटन के साथ–साथ सुरक्षा तो है ही। इसी कारण स्त्री दोयम एवम् हीन होकर जीने की यंत्रणा को अपनी नियति मानकर जीती चलती है। लेकिन आज की मुक्त, जागरूक, स्वाभिमानी स्त्री समझती है कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था अपने वर्चस्व को पाँच आधारभूत संस्थाओं के आधार पर बनाए रखती है। ये संस्थाएँ हैं – परिवार, विवाह, मीडिया, धर्म, कानून। परिवार स्त्री को हीन बनाकर उसके मार्ग में अवरोध पैदा करता है। विवाह स्त्री की परिधि और क्षितिज को काटकर उसे गर्भ में बदल देता है। मीडिया स्त्री को मात्र सज्जा की वस्तु बना देता है और उसे केवल देह में परिवर्तित कर देता है। धर्म, समाज को रूढ़ियों में बांधकर उसके पैरों में बेडियाँ डाल देता है और कानून कभी भी उसको न्याय नहीं देता। स्त्री इन पाँचों संस्थाओं में विकल्प ढूँढ़ रही है और वह 'सह अस्तित्व' समाज की स्थापना पर बल देती है, जिसमें स्त्री और पुरूष दोनों का समान रूप से सहयोग हो।

वर्तमान में आर्थिक स्वावलम्बन के कारण परिवार में नारी की स्थिति बदलने लगी है। पहले स्त्री घर और परिवार की सुरक्षा में जीना बेहतर समझती थी। आज वह स्वतंत्र है और साथ ही आत्मनिर्भर भी,

इसलिए वह अपनी सुरक्षा भी स्वयं कर सकती है। अपनी इच्छाओं का दमन कर घुट–घुट कर जीवन जीने वाली स्त्री जब से आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हुई तब से वह पुरूष के साथ बराबरी का जीवन जी रही है।

प्राचीन समय से ही नारी के कार्य क्षेत्र की परिधि घर तक ही सीमित थी। मध्यवर्ग तथा उच्च वर्ग की स्त्रियाँ अपने घरों की चार–दीवारी में ही कैद रहती थी। इन वर्गों की किसी भी स्त्री के लिए घर से बाहर निकलकर काम करना लाभजनक कम और अपमानजनक ज्यादा माना जाता था। प्राचीन समय से ही स्त्री ''अर्थ के सम्बन्ध में सभी क्षेत्रों में एक प्रकार की विवशता के बन्धन में बंधी हुई है। कही पुरूष ने न्याय का सहारा लेकर और कहीं अपने स्वामित्व की शक्ति का लाभ उठाकर उसे इतना अधिक परावलम्बी बना दिया है कि वह उसकी सहायता के बिना संसार पथ पर एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकती।''[2]

लेकिन आधुनिक युग में पाश्चात्य शिक्षा एवं अधिकारों के प्रति सजग स्त्री आज आर्थिक स्वाधीनता के लिए संघर्ष करने में लगी हुई है। वर्तमान अर्थ युग की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि स्त्री की आर्थिक स्वालम्बिता का प्रार्दूभाव है। आधुनिक स्त्री ने एक स्वतन्त्र पहचान बनाई है। आज स्त्री आर्थिक दृष्टि से पुरूषों पर आश्रित न रहकर आर्थिक स्वावलम्बन की मांग करती है। वह पुरूष की दासी नहीं संगिनी बनकर रहना चाहती है। पुरूष द्वारा किए गए अत्याचार का मुँह तोड़ जवाब देने का सामर्थ्य रखती है। ''आधुनिक परिस्थितियों में स्त्री की जीवन धारा ने जिस दिशा को अपना लक्ष्य बनाया है। उसमें पूर्ण आर्थिक स्वतन्त्रता ही सबसे अधिक गहरे रंगों में चित्रित है।''[3]

'मैकडानल' कहानी में तीन सहेलियाँ एक ही स्थान पर एक ही शिफ्ट में काम करती हैं। तीनों के अपने–अपने परिवार और प्राथमिकताएँ हैं। उनमें से एक है – अनु। वह बी०ए० की विद्यार्थी है और अपनी पढ़ाई का खर्च स्वयं उठाने के लिए 'मैकडानल' में नौकरी करती है। उसके सपने और इच्छाएँ बड़ी हैं। वह आगे कुछ बड़ा करना चाहती है ताकि अपने पैरों पर खड़ी हो सके। उसे पता है कि उसे अपनी जिन्दगी से क्या चाहिए, किसी पुरूष का प्रेम उसके लिए कुछ देर शांति प्राप्त करने का माध्यम भर है। वह अपने कैरियर को ही प्राथमिकता देने वाली लड़की है। जब उसकी सहेलियाँ उससे उसके प्रेमी के बारे में पूछती हैं तो वह गर्म घी में डाले बघार की तरह छिटकती हुई कहती है – ''कोई प्रेमी नहीं चाहिए मुझे। जिन्दगी में मुझे क्या करना है। जानती हूँ। मुझे क्या चाहिए, यह भी जानती हूँ। मुझे सारी जिन्दगी इस मैकडॉनल की नौकरी नहीं करनी। बी०ए० हो जाएगी। मैनेजमेंट करूंगी। आगे जाना है मुझे।''[4] अनु एक आत्मविश्वासी और स्वावलम्बी लड़की है। जो परिवार को आर्थिक सहायता तो प्रदान कर ही रही है, साथ ही भविष्य के सुनहरे सपने देखने का भी साहस रखती है।

अधिकतर पुरूषों में यह धारणा प्रचलित है कि आधुनिक शिक्षा प्राप्त स्त्रियाँ अच्छी गृहणियाँ नहीं बन सकती। लेकिन आज के युग में ऐसी बहुत सी स्त्रियाँ है जो घर और बाहर के कार्यक्षेत्र में सामंजस्य रखती हैं। वास्तव में स्त्री अब केवल रमणी या भार्या नहीं रही वरन् घर के बाहर भी समाज का एक विशेष अंग तथा महत्वपूर्ण नागरिक हैं। प्रगतिशील देश की जागृत स्त्रियों ने यह साबित कर दिया है कि वे भी पुरूष के समाना अपने जीवन को व्यवस्थित तथा कार्य क्षेत्र को निर्धारित कर सकती है। आधुनिक युग में ऐसे बहुत से क्षेत्र हैं जो स्त्री के सहयोग की उतनी ही अपेक्षा रखते हैं, जितनी पुरूष के सहयोग की। स्त्रियाँ घर–परिवार को आर्थिक सहायता प्रदान कर रही हैं। बल्कि कई बार तो घर केवल स्त्रियों के ही आर्थिक दम पर चलता है। वह परिवार के सदस्यों की जरूरतों का उतने ही अच्छे से ख्याल रख सकती हैं जितना की पुरूष आर्थिक रूप से रखता है। स्त्रियों के इस आर्थिक सहयोग को नकारा नहीं जा सकता।

'सडांध' कहानी की नायिका एक आत्मनिर्भर अविवाहित लड़की है। वह शिक्षा मंत्रालय में स्कूल निरीक्षक के पद पर है। घर की वह सबसे बड़ी बेटी थी। अपने पिता की आर्थिक सहायता करने के लिए उसने विवाह नहीं किया था। एक जिम्मेदार पुरूष की तरह वह घर की सभी जिम्मेदारियों को अपने कंधों पर वहन करती है और माता–पिता की मृत्यु के बाद भाईयों की पढ़ाई–लिखाई, उनकी जरूरतों का पूरा ध्यान रखा और उन्हें उनके पैरों पर खड़ा किया, यथा ''माँ–बाप कब के सिधार गये थे। भाई शहर चले गये थे। जितनी सेवा कर सकती थी उनकी, की। भाइयों को पढ़ाया, लिखाया, उनकी सारी जरूरतें पूरी की। अब वे बड़े हो गये, अपने घर–बार के।''[5]

स्त्री के जीवन की अनेक विवशताएँ अर्थ से सम्बन्ध रखती है। स्त्री का विशिष्ट व्यक्तित्व उसे एक अलग मार्ग खोजने से रोक नहीं सकता और न ही उसे घर की संकीर्ण सीमा तक सीमित रखा जा सकता है। आधुनिक स्त्री आत्मनिर्भर हो पुरूष के अर्थोपार्जन में सहयोग दे रही है। ''व्यक्तित्व की धारणा के आधार पर जो गति और प्रगति हो रही है उसमें समाज पट के तंतु क्षीण होते हैं और हार्दिकता का मूल्य घटता है। ...व्यक्ति–व्यक्ति के बीच पैसा ही यदि सम्बन्ध का नियमन और निर्माण करता है तो स्त्री का सहयोगिनी और सहचारिणी का रूप गौण पड़ता है और क्रीता और भोग्या के रूप में उभरने लगता है।''[6] आधुनिक स्त्री स्वयं को भोग्या के रूप में देखना नहीं चाहती। वह आत्मनिर्भर होकर घर और बाहर के कार्यक्षेत्र में सामंजस्य स्थापित कर उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करती है।

'धारावी' कहानी की नायिका 'धारावी' एक आत्मनिर्भर स्त्री है। वह शादी के बिना अपने प्रेमी आकाश के साथ रहती है। उसकी आत्मनिर्भरता के विषय में आकाश कहता भी है – ''तुम इतनी इंटेलीजेंट हो,

इंडीपेंडेंट हो, और प्रोफेशनल हो। इतनी बड़ी पोजिशन पर हो।''[7] आकाश, धारावी की आत्मनिर्भरता और उसके आत्मविश्वास पूर्ण व्यक्तित्व से काफी प्रभावित है।

कार्निक ने ठीक ही कहा है – ''अभियंता तथा वास्तुकार बनने वाली स्त्रियों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। किसी भी व्यवसाय या कार्यक्षेत्र का दरवाजा स्त्रियों के लिए बंद नहीं है और इन अवसरों का सदुपयोग अधिक से अधिक स्त्रियाँ ही कर रही है। यह प्रवृत्ति सारे भारत में वर्तमान है और इसका एहसास कोई भी व्यक्ति कर सकता है।''[8] मार्क्स ने कहा था कि – ''स्त्रियों की सामाजिक स्थिति से सामाजिक प्रगति को ठीक–ठाक नापा जा सकता है।''[9]

स्वतन्त्र भारत में तो नारी ने अपनी स्वतन्त्र पहचान बनायी। अब वह पुरूष पर आश्रित न रह कर स्वावलम्बी बन गई। वह पुरूष की दासी नहीं अपितु संगिनी बन कर रहती है। पुरूष द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों का मुँहतोड जवाब देती है। समाज में पुरूषों के समकक्ष अधिकार एवं प्रतिष्ठा के लिये संघर्ष कर रही है। भारतीय संविधान में भी पुरूषों के समान अधिकार मिले हैं। 1956 में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार स्त्रियों को बराबर का अधिकार दिया गया।

स्त्री शिक्षा को स्वीकृति मिलने से स्त्री की किस्मत का द्वार खुल गया। वह सदियों पुरानी जंजीरों को तोड़कर शिक्षा के क्षेत्र में आगे आयी। शिक्षा के जागरण से पुरूष भी यह सोचने पर विवश हो गया कि वह स्त्री के साथ अन्याय कर रहा है और वह उसके महत्व को समझने लगा। शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् स्त्री–पुरूष के अधीन नहीं रही वरन् वह स्वावलम्बी बन गई है। वह किसी भी क्षेत्र में नौकरी करने के लिए स्वतन्त्र है। लेकिन आज भी बहुत सी स्त्रियाँ शिक्षित नहीं है। शिक्षा के अभाव में वे आत्मनिर्भर भी नहीं बन पायी और परिवार का दबाव व यंत्रणाएँ सहती रही। लेकिन वे आत्मनिर्भर होने के महत्व को समझती रही हैं और चाहती है कि उनकी बेटियाँ उनकी तरह अशिक्षित न रहे, अपने पैरों पर खड़ी हों और जीवन की ऊँचाइयों को छुए।

'प्रभा खेतान' ने अपनी आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' में अपनी अशिक्षित माँ की इस इच्छा को स्पष्ट किया है। 'प्रभा' जी की माता जी पढ़ी–लिखी नहीं थी, लेकिन वे शिक्षा के महत्व को समझती थी। वह अपनी बेटी को कभी भी अपने वाली स्थिति में नहीं देखना चाहती थी। उनका अपना परिवार था, लेकिन परिवार में उनकी स्थिति एक घर की देखभाल करने वाली स्त्री से अधिक नहीं थी। अपनी माता के परोक्ष मन के बारे में 'प्रभा' जी लिखती है, ''अम्मा का एक परोक्ष मन था जो हमसे यह कहना चाहता था ... कि औरत को आत्मनिर्भर होना चाहिए। जिन्दगी में जोखम उठाना सीखना चाहिए। अम्मा के पोर–पोर से फूटती निराशा चीख–चीखकर कहना चाहती – क्या मिला मुझे? माना कि पति देवता थे पर उन्हें देवत्व के पद पर

मैंने ही आसीन किया था। लेकिन मैं तो देवी नहीं बन गई, क्या मेरी कोई मानवीय आकांक्षा नहीं ? भूल जाऊँ अपने आपको ? बस दिन–रात तुम बच्चों की चिन्ता करूँ, तुम्हारे लिए जीऊँ, तुम्हें दे दूँ सब कुछ ? मैं कुछ भी न रहूँ ?''[10]

'प्रभा खेतान' की माँ चाहती थी कि उनकी बेटियाँ स्वावलम्बी बने। अपने अशिक्षित होने की कसक उनके मन में थी, यथा, ''किसी भी पढ़ी–लिखी स्वावलम्बी स्त्री को देखती तो अम्मा यही कहा करती, ''तुम लोग जरूर रूपया कमाना, अपने पैरों पर खड़ी होना। आखिर हमें क्या मिला ? बस बच्चे पैदा करती रही। अम्मा ने कभी नहीं कहा मेरी तरह बनो।''[11]

कमल की कहानियों की कई नायिकाएँ भी कम पढ़ी–लिखी हैं। लेकिन कमल जी ने उन्हें स्वावलम्बन का मजबूत आधार प्रदान किया हैं। ज्यादा शिक्षित न होने पर भी ये निम्न वर्ग की महिलाएँ अपने परिवार के लिए आर्थिक सहायता तो प्रदान करती ही है, चाहे वह घरों में बैठकर सिलाई, कढ़ाई का काम हो या किसी स्वयं सेवी शिक्षा केन्द्र में कुछ घंटों का अध्यापन कार्य हो। उनकी नायिकाएँ अपने पैरों पर खड़ी है और आत्म सम्मान के साथ जीवन व्यतीत कर रही हैं।

'पालतू' कहानी की नायिका शकुन्तला जो अपने पति द्वारा घरेलू हिंसा की शिकार है, पति को छोड़ना चाहती है लेकिन माँ के समझाने पर वह अपने लिए कोई काम ढूँढ़ने का प्रयास करती है और उसे काम मिल भी जाता है। काम के साथ–साथ वह अपने बच्चों की पूरी देखभाल भी करती है और उनकी जरूरतें भी पूरी करती है। मिसेज गुप्ता उसे अपने शिक्षा केन्द्र में पढ़ने का काम दे देती है, जो उसकी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, यथा – ''हमारा यहाँ शिक्षा केन्द्र है। गरीब बच्चों के लिए चलता है। तुम सुबह आठ बजे से बारह बजे तक यहाँ आकर इन्हें पढ़ा सकती हो। हम बहुत अधिक वेतन तो नहीं दे सकते। यह हमारी स्वयंसेवी संस्था है लेकिन इन चार घंटों के दो हजार तक दे देंगे। शाम को यूं ही प्रौढ़ों को शिक्षा भी दी जाती है। अगर एक–डेढ़ घंटा शाम को आओ तो एक हजार रूपये और दे सकते हैं। ...उसकी जिन्दगी ने नया मोड़ लिया था। सुबह उठकर बच्चों का टिफिन तैयार करती। रामेश्वर का नाश्ता बनाकर रख देती और बच्चों के साथ निकल जाती। उन्हें स्कूल छोड़कर मिसेज गुप्ता के शिक्षा केन्द्र पहुँच जाती। वापसी में बच्चों को स्कूल से लेकर घर चली जाती।''[12] शकुन्तला ने अपने परिवार की आर्थिक जिम्मेदारियों को बखूबी निभाया जो कि एक सराहनीय कार्य है।

इसी तरह 'धन्नी का मंत्र' की नायिका सुभागी एक स्वयंसेवी संस्था के साथ मिलकर कढ़ाई का काम करके अपने परिवार का पालन–पोषण करती है। ''तुम्हारा काम देखा था मैंने, बहुत अच्छा था। संस्था की औरत घर आकर तुम्हें रंगीन धागे, कपड़ा, कपड़े के टुकड़े, शीशे, सितारे और दूसरी चीजें दे देंगी। घर

आकर ही तैयार माल ले जाएंगी। काम की सही मजदूरी तुम्हें मिलेगी। तुम्हारे बच्चे छोटे हैं। घर में बैठकर, फुरसत से काम करोगी और कुछ पैसा भी कमाओगी।

सुभागी ने हामी भरी थी। वह नरपत सिंह के जाने के बाद, मंगरू को स्कूल भेजती, घर का काम निपटाती और संस्था के लिए चीजें बनाती। छोटी प्रिया पास ही खेलती रहती। संस्था से सामान आता, वह अपने हुनर से रंग–बिरंगे धागों, शीशों, सितारों से सजाकर चादरों, तकिए के गिलाफों, थैलों, गद्दी के कवर में जान डाल देती। सुभागी के हाथ में जादू था। उसका काम अलग पहचाना जाता था। उसे मजदूरी के पैसे मिलते जिन्हें वह अलग रख लेती।''[13]

कुमार की कहानियों की लगभग सभी नायिकाएँ आत्मनिर्भर है। 'शुभारम्भ' की मृणाल अध्यापिका है, 'धारावी' की नायिका धारावी एक इंडीपेंडेंट स्त्री है, 'मंडी' में नायिका किसी कम्पनी में काम करती है, 'औरत जात' की मधु मल्टीनेशनल कम्पनी में अफसर है, 'संडाध' की नायिका स्कूल निरीक्षक के पद पर कार्यरत है, 'पालतू' की शकुन्तला एक स्वयंसेवी शिक्षा केन्द्र में पढ़ाती है, 'वीरावाली' की 'वीरा' अपनी मेहनत और हिम्मत के बल पर पुलिस विभाग में नौकरी पाने में सफल होती है, 'धन्नी का मंत्र' की सुभागी घर पर ही कढ़ाई का कार्य करती है और 'मैकडॉनल' की तीनों स्त्रियाँ भी आत्मनिर्भर हैं, 'मदर मेरी' में भी एक स्त्री मीडिया से जुड़ी हुई है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आधुनिक स्त्री सुशिक्षित होकर स्वयं के लिए नई राहों का निर्माण कर रही है। आज की स्त्री शिक्षा के सहारे स्वावलम्बन की दिशा में आगे बढ़ रही है। समाज पता नहीं क्यों जन्म लेते ही कन्याओं को विवाहोपयोगी और पुरूषोपयोगी बनाने के चक्कर में उनकी स्वाभाविक प्रतिरोधक क्षमता को नष्ट कर देता है ? पहली और सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है, शिक्षा और स्वावलम्बन! आर्थिक स्वतन्त्रता ही अन्य सब क्षेत्रों में स्वतन्त्रता की जननी है। लड़की चूल्हा–चक्की और गुड़िया से जरूर खेले, मगर स्लेट–पेंसिल पर उसके जन्मजात–नैसर्गिक अधिकार को मत तौलिए। बल्कि उसके इस अधिकार के लिए संघर्ष करना चाहिए। उसे स्थापित करना चाहिए ताकि वह अपने पैरों पर खड़ी हो सके।

सन्दर्भ सूची

[1] डॉ० रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृ० 47–48
[2] महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कडियाँ, पृ० 45
[3] महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, पृ० 109
[4] कमल कुमार, मदर मेरी और अन्य कहानियाँ, पृ० 151
[5] कमल कुमार, मदर मेरी और अन्य कहानियाँ, पृ० 61
[6] जैनेन्द्र कुमार, नारी 'अर्थोपार्जन में नारी का सहयोग, पृ० 47
[7] कमल कुमार, मदर मेरी और अन्य कहानियाँ, पृ ० 38
[8] कार्निक, 1973, पृ० 5
[9] लेबर ब्यूरो रिर्पोट, 1953, पृ० 2
[10] प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, पृ० 91
[11] वही, पृ० 33
[12] कमल कुमार, मदर मेरी और अन्य कहानियाँ, पृ० 122
[13] वही, पृ० 145